क्या पाकिस्तान का वजूद क़ायम रहेगा ?

भारत सरकार सीमा पर पाक की उदंडतापूर्ण उकसावे वाली ग़तिविधियों के बावजूद अगर संयम बरत रही है तो इसके लिए भी 'ऊपर' से दबाव है, उसी अमेरिका का जो पाकिस्तान का बाप बना हुआ है। अमेरिका की छड़ी के इशारे पर भारत-पाक, दोनों चलते हैं। वह दोनों को नचाता है, साधता है और अपना उल्लू सीधा करता है। दक्षिण एशिया में, इस वक़्त युद्ध नहीं, युद्ध के भय की ज़रूरत है। इससे पाकिस्तान, हिंदुस्तान और अमेरिका, तीनों के हित सधेंगे। अमेरिका के हथियार बाज़ार में कुछ गरमाहट पैदा हो जाएग़ी। पाकिस्तानी फ़ौज सत्ता पर काबिज़ हो सकती है, वैसे सत्ता में उसकी दखलन्दाज़ी तो रहती है। जहां तक भारत का सवाल है सोनिया-मनमोहन अगर उकसावे के बावजूद संयम बरतने के लिए सराहे जाएंगे तो मुख्य विपक्षी दल भाजपा पाक से युद्ध को मुद्दा बना 'मिडल क्लास' की भावनाओं को भड़काने की कोशिश करेगी, जबकि इसे वोट में बहरहाल, स्थितियां दिन-ब-दिन अप्रिय होती चली जा रही हैं।

पाकिस्तान नफ़रत की नींव पर खड़ा किया गया मुल्क है। नफ़रत इसके अस्तित्व के मूल में है। नफ़रत युद्ध, लड़ाइयों में ही अभिव्यक्त होता है। यही कारण है कि 14 अगस्त, 1947 को अस्तित्व में आने के बाद इसने भारत से कई लड़ाइयां लड़ीं। ब्रिटिश हुक्मरानों की शह पर, आज़ादी मिलते ही तुरंत क्या विडंबना है कि उस दौरान युद्धरत दोनों देशों की सेनाओं की कमान ब्रिटिश जनरलों के हाथों में थी। ब्रिटिश साम्राज्यवादी नवजात पाकिस्तान को भारत से लड़ा रहे थे। इस तरह, युद्ध पाकिस्तान को घुट्टी में पिलाया गया।

इसके बाद छोटे-मोटे कई युद्ध हुए। और सबसे अंतिम कारगिल। सभी युद्धों में पाकिस्तान को मुंह की खानी पड़ी। वह भारत की सैन्य शक्ति का मुकाबला नहीं कर सकता। अमेरिका, चीन खुलकर भी उसके साथ मैदान-ए-जंग में उतर आएं तो भी नहीं। इस देश का बच्चा-बच्चा अपनी मातृ-भूमि की रक्षा के लिए खड़ा हो जाएगा। शंकर का जब रौद्र नृत्य शुरू होगा तो संहार का वह दृश्य उपस्थित होगा, जिसकी शायद अब तक कल्पना भी न की गई हो। जिस एटमी ताकत के बूते और अमेरिका-चीन द्वारा पीठ ठोके जाने से पाक इतराता है, वह उस नादान बच्चे की क्षणिक खुशी है, जिसके हाथों गैस भरा गुब्बारा छूट कर कब फूट जाए, कहना मुश्किल है।

पाकिस्तान की एटमी ताकत चोरी की है। उसकी सेना में आतंकवादी तत्व भरे पड़े हैं। आई एस आई के हाथों में पाकिस्तानी सेना की बागडोर है और आईएसआई आतंकियों का सरगना है। हाफ़िज सईद जैसे आतंकवादी पाकिस्तान के सरकारी दामाद हैं और कहते हैं कि सीमा पर जो हालिया सरगर्मी हुई है, उसी के शैतानी दिमाग़ की उपज है।

पाकिस्तान दुनिया का सबसे ग़ैर जिम्मेदार राष्ट्र बन चुका है। सवाल यह भी है, क्या उसे संप्रभु राष्ट्र कहा जाना मुनासिब है। उसका सबसे बड़ा खैर ख्वाह अमेरिका लगातार उसकी संप्रभुता की खिल्ली उड़ाता रहा है। अमेरिकी ड्रोन बेरोक-टोक पाक की सीमा में प्रवेश कर बम बरसाते रहे हैं और वह चूं तक तक नहीं कर सकता। पाकिस्तानी हुक्मरान अमेरिकी शासकों की कठपुतली रहे हैं, अभी भी हैं।

पाकिस्तान में जम्हूरियत कभी रही नहीं। वहां की सरज़मीं पे ज़म्हूरियत टिक भी नहीं सकती। थियोक्रेटिक स्टेट (इस्लामिक राज्य) में ज़म्हूरियत के लिये क्या कोई जगह हो सकती है। पाकिस्तान के जिस बर्बर कृत्य की बात जो अभी हो रही है (सैनिकों का सिर काटकर ले जाने की), वह बर्बरता उसके ख़ून में रची-बसी है।

पाकिस्तान के निर्माता कायदेआजम मुहम्मद अली जिन्ना उसे एक डेमोक्रेटिक स्टेट बनाना चाहते थे-आधुनिक राज्य, पर अपने जीवन के अंतिम दिनों में बुरी तरह अकेले पड़ गए थे वो, भारत में जैसे गांधी, इतिहास इसका गवाह है। और दिखावे के लिये ही सही, जब-जब ज़म्हूरियत पाकिस्तान में आई, सैन्यतंत्र के मुकाबिले उसने जनता का ज़्यादा ही खून पीना शुरू किया। शायद इसीलिए पाकिस्तान की जनता ज़म्हूरियत पसंद नहीं करती। 'मिस्टर टेन पर सेंट' आसिफ अली जरदारी जो इस मुश्किल वक्त में देश से बाहर हैं। वहां के सबसे ज़्यादा नापसंदीदा शख्स है। न्यायालय ने पाकिस्तानी प्रधानमंत्री की गिरफ़्तारी के आदेश जारी कर दिए हैं। इससे ज़्यादा शर्मनाक बात वहां के शासक वर्ग के लिये और क्या हो सकती है। पर जो हुक्मरान हैं, शर्म उन्हें आती नहीं। पाक जनता के लिए रोटी का जुगाड़ कर पाना लगातार कठिन होता चला जा रहा है। महंगाई सातवे आसमान से भी ऊपर जा चुकी है। हर चीज़ की क़िल्लत है। वेश्याओं तक को गाहक नहीं मिल पा रहे। बड़ी मुश्किल है। अर्थव्यवस्था कर्ज़ के बोझ तले इस कदर दबी है कि कराह पाना तक मुश्किल। और हुक्मरान विदेशों में ऐय्याशी कर रहे हैं।

पाकिस्तान की राजनीति भयानक उथल-पुथल के दौर से गुज़र रही है। जरदारी की सत्ता डांवाडोल है। रिटायरमेंट के करीब पहुंच चुके सेनाध्यक्ष जनरल कयानी अपने लिए संभावनाओं की तलाश में लगे हैं। सत्ता हथियाने के लिए, तख़्तापलट के लिए, उन्हें पैदाइशी दुश्मन भारत से एक छोटे-मोटे युद्ध की सख़्त ज़रूरत है। इसीलिए आतंकवादियों को सीमापार घुसाया जा रहा है। वैसे, यह सच है कि सीमापार से आतंकवादियों की घुसपैठ कभी रूकी नहीं; ये आतंकी जिनमें भाड़े के विदेशी टट्टू भी शामिल हैं, रोज़ ही कश्मीर में मां-बहनों की इज़्ज़त तार-तार करते हैं और भारत सरकार चुपचाप बैठी यह सब होता देखती है। शेख अब्दुल्ला के वंशज ऐय्याशियों में डूबे हैं। उनहें जनता की जान, औरतों की अस्मत की कोई फ़िक्र नहीं। बहुत ही बुरा हाल है।

पाकिस्तानी सेना उकसाने वाली गतिविधियां करेगी। अब देखना है, जवाब में भारत सरकार क्या करती है। भाजपा कहती है-ईंट का जवाब पत्थर से दो। शिवसेना का भी यही कहना है। मुलायम सिंह भी यही कह रहे हैं। रक्षा मंत्री जो रह चुके हैं। मायावती ऐसा नहीं कह रहीं। लेकिन देश में युद्धोन्माद का वातावरण बनता चला जा रहा है। कुछ तो देशभक्ति का व्यापार तक करने लगे। बाज़ारवाद के इस दौर में कोई चीज़ ऐसी नहीं जिसकी तिज़ारत न हो सके। देशभक्ति ही सही। भाजपा के पास मुद्दा नहीं था। अब यही मुद्दा है-ज़ंग, पाकिस्तान को सबक सिखाओ। पर शायद, आडवाणी इसके पक्ष में न हों। उन्हें पता है, अब पाकिस्तान के खिलाफ़ युद्धोन्माद भड़काकर, सांप्रदायिक भावनाओं को उभारकर जनता से वोट नहीं लिए जा सकते। पर काली टोपी पहनने के साथ ही आंखों पर भी काली पट्टी बांध चुके संघ प्रमुख मोहन भागवत की समझ में यह बात नहीं आ सकती, न ही उनके फ़रमाबरदार भाजपा अध्यक्ष गडकरी के। बहरहाल, जनता के लिए मुद्दा रोटी है, पाकिस्तान से युद्ध नहीं। यह मुद्दा तो खाए-पिए-अघाए लोगों का हैं। पर वोट तो 60-70 फ़ीसदी लोग ही देंगे और इनमें ग़रीबों की तादाद ज़्यादा होती है।

भारत सरकार सीमा पर पाक की उदंडतापूर्ण उकसावे वाली ग़तिविधियों के बावजूद अगर संयम बरत रही है तो इसके लिए भी 'ऊपर' से दबाव है, उसी अमेरिका का जो पाकिस्तान का बाप बना हुआ है। अमेरिका की छड़ी के इशारे पर भारत-पाक, दोनों चलते हैं। वह दोनों को नचाता है, साधता है और अपना उल्लू सीधा करता है। दक्षिण एशिया में, इस वक़्त युद्ध नहीं, युद्ध के भय की ज़रूरत है। इससे पाकिस्तान, हिंदुस्तान और अमेरिका, तीनों के हित सधेंगे। अमेरिका के हथियार बाज़ार में कुछ गरमाहट पैदा हो जाएग़ी। पाकिस्तानी फ़ौज सत्ता पर काबिज़ हो सकती है, वैसे सत्ता में उसकी दखलन्दाज़ी तो रहती है। जहां तक भारत का सवाल है। सोनिया-मनमोहन अगर उकसावे के बावजूद संयम बरतने के लिए सराहे जाएंगे तो मुख्य विपक्षी दल भाजपा पाक से युद्ध को मुद्दा बना 'मिडल क्लास' की भावनाओं को भड़काने की कोशिश करेगी, जबकि इसे वोट में बहरहाल, स्थितियां दिन-ब-दिन अप्रिय होती चली जा रही हैं। अगर ऐसा ही चलता रहा तो कश्मीर की बेकस और मजलूम जनता के लिए, तोपों का चारा बनने वाले निर्दोष सैनिकों के लिए लंबे समय तक इस तरह की घिनौनी वारदात बर्दाश्त करते चले जाना कठिन होगा।

एक हद के बाद तो जनता जवाब मांगेगी। और जवाब नहीं मिला तो आगे बढ़कर जवाब दे भी सकती है। देखना है, वो वक़्त कब तक आता है। वैसे, भारतीय प्रेस परिषद् के अध्यक्ष जस्टिस मार्कंडेय काटजू साहब ने कहा है कि पाकिस्तान का वजूद 15-20 सालों से ज़्यादा नहीं रहने वाला। वाकई एक फ़र्जी स्टेट है पाकिस्तान। साम्राजी ताकतों की नाजायज औलाद।

-मनोज कुमार झा

जनांदोलन और उनकी दिशा

पूंजीपति वर्ग का मुकाबला करना है तो मजदूर वर्ग की वैज्ञानिक विचारधारा अपनानी होगी। उसके आधार पर खड़े होकर ही छोटे-बड़े संघर्ष किये जा सकते हैं। एक सूत्र में पूरे देश के शोषित-उत्पीड़ितों के आंदोलनों को जोड़ा जा सकता है।

हमारे देश में इस वक्त सैंकड़ों किस्म के छोटे-बड़े आंदोलन चल रहे है। इनमें से कोई तो ऐसे हैं जिन्हें लम्बा समय हो गया है। इन आंदोलनों की मांगों को देखा जाय तो कहीं पुलिस के जुल्म का विरोध है, कहीं बड़े बांधों का विरोध, कहीं किसान मांग कर रहे हैं कि, उनकी ज़मीन न छीनी जाए तो कहीं आदिवासी मांग कर रहे हैं कि, उनकी सदियों पुरानी रिहायश से उन्हें उजाड़ा ना जाए। हर शहर, हर कस्बे में सामान्य जन संघर्ष करते हुए मिल जायेंगे और कई लोग तो ऐसे मिल जाते हैं जो महीनों से अकेले ही अपनी मांगों के लिए संघर्ष कर रहे होते हैं।

पुलिस, प्रशासन, राज्य व केन्द्र सरकारों के साथ-साथ भारतीय मीडिया व न्यायालयों का दृष्टिकोण इनके प्रति उपेक्षा, कामों में व्यवधान उत्पन्न करने वाले तथा सिरफिरे लोगों का काम समझा जाता है। जंतर-मंतर से लेकर प्रत्येक तहसील में अक्सर ही ऐसे लोग मिल जायेंगे। जिनकी मांगों को लम्बा अरसा हो गया है लेकिन कोई सुनने-देखने वाला नहीं है। वैसे पता सबको है। फिर ये बेरुखी क्यों? और सवाल भी उठता है कि अक्सर ये ही आंदोलन अपनी मंजिल क्यों नहीं पा पाते हैं। भोपाल गैस कांड के पीड़ितों को लड़ते हुए तीन दशक बीतने को हैं। नर्मदा बचाओ आंदोलन भी लम्बे अरसे तक चलता रहा, इरोम शर्मिला को आमरण अनशन पर बैठे हुए ग्यारह साल बीत गये। जहां तक सवाल शासन-प्रशासन या शासक वर्ग का है, वह यह है कि वह इन्हें अपने हितों के खिलाफ़ पाता है। अगर व्यापक जनसमर्थन है तो वह एक बारगी सुनने को बाध्य होता है परन्तु तुरन्त ही वहां फूट डालने या फिर खरीद-बेचो की नीति अपनाता है। इतने पर भी वह आंदोलन चलता रहता है तो वह क्रूरतापूर्वक दमन करता है। अगर आंदोलन सीमित है, शातिपूर्वक व संगठित ढंग से चल रहा है तो वह उपेक्षा व तिरस्कार का भाव रखता है। मीडिया में खबरें रस्मी तौर पर छप गयीं तो छप गयीं। शासक वर्ग का ऐसा रुख उसके वर्गीय चरित्र की उत्पत्ति है। लोकतंत्र कहने से इस शासन पद्धति का मूल चरित्र जो कि एक वर्ग की दूसरे वर्ग पर तानाशाही है, बदल नहीं जाता है। यह पूंजीपति वर्ग की तानाशाही का सबसे प्रच्छन्न रूप है। सैन्य (पाकिस्तान या म्यांमार की तानाशाहियां) या सिविल तानाशाही (जैसी इंदिरा गांधी ने 1975 में आपातकाल के समय लगायी थी) उसकी तानाशाही के नग्न रूप हैं। लोकतंत्र के जरिये पूंजीपति वर्ग का शासन अधिक स्थायी तथा सरकार चुनने की प्रक्रिया का हिस्सा बनने के कारण ज्यादा छल से भरा और भ्रम पैदा करने वाला होता है। पार्टियों की अदला-बदली, किसी ईमानदार या साधारण आदमी का चुनाव लड़ जाना, चुनाव आयोग सख्ती या निष्पक्षता जैसी चीजों से जनता ही शासक है, की झूठी धारणा को बल मिलता है। शासक वर्ग जिस बात को छुपाना चाहता है, छुप जाती है। जो दिखाना चाहता है वह दिख जाती है। लोकतंत्र के नाम पर लोग छले जाते हैं और छलते ही चले जाते हैं। जनता को दिया गया थोड़ा सा जनवाद पूंजीपति वर्ग का बहुत बड़ा काम कर देता है। उसकी तानाशाही चलती रहती है। गुलाम अपनी बेड़ियों को गहने समझकर पहने रहते हैं।

यहीं से एक और महत्वपूर्ण बात निकलती है। वह यह कि जनता की मांगों को लेकर संघर्ष करने वाले, नेतृत्व देने वालों की सोच व विचारधारा क्या है? क्या वे बेड़ियों को बेड़ियां समझते हैं या फिर उन्हें गहनों के रूप में प्रचारित करते हैं। शासक वर्ग, उसकी पार्टियां और उसका मीडिया ऐसा करे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं समझी जानी चाहिए। ये तो उनका काम हैं। शासक वर्ग, उसकी पार्टियां और उसका मीडिया ऐसा करे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं समझी जानी चाहिए। ये तो उसका काम है। गुलामों के शरीर व दिमाग की बेड़ियां तो उसके रक्षा कवच हैं। लेकिन जनआंदोलनों या जनसंघर्षों को सच्चे व ईमानदारी पूर्वक चलाने वाले लोग भी ऐसा करें तो यह खतरनाक है। वे अनजाने ही शासक वर्ग की कठपुतली बन जाते हैं। कई भले लोग अंत में थक-हारकर घर बैठ जाते हैं।

यहीं से एक बुनियादी सवाल खड़ा हो जाता है कि फिर इन जनांदोलनों या संघर्षों का भविष्य क्या हो सकता है या फिर इनकी दिशा क्या हो? क्या किया जाए कि जनता को अपनी लड़ाई में सफलता मिले। मज़दूरों, किसानों, स्त्रियों, आदिवासियों आदि शोषित-उत्पीड़ित तबकों के जीवन में तात्कालिक राहत से लेकर बुनियादी बदलाव आयें।

अब सवाल संगठगन करने वालों, नेतृत्व देने वालों, संर्घष करने वालों के दर्शन, विचारधारा व सोच का है। पूंजीपति वर्ग जो आज का शासक वर्ग है, को कोई ठोस चुनौती उसी का विचारधारा, उसी की सोच, उसी के तंत्र, उसी के मीडिया द्वारा नहीं दी जा सकती है। पूंजीपति वर्ग जमीन पर खड़े होकर पूंजीपति वर्ग का मुकाबला करने का हम्र वही होना है जो हमारे समाज में लम्बे समय से चले आ रहे आन्दोलनों का हो रहा है। पूंजीपति वर्ग की विचारधारा वह चाहे अपने को गांधीवाद के रूप में प्रकट करे या फिर संघ की फासिस्ट विचारधारा के रूप में, वे सारत: एक ही हैं। उनमें कुछ मुद्दों पर भिन्नता और वैपरीत्य हो सकता है या होता भी है परन्तु इनके आधार पर खड़े संघर्ष भारत के मज़दूरों-किसानों, शोषित-उत्पीड़ित तबकों के जीवन में बुनियादी परिवर्तन लाने में अक्षम हैं। बड़े बांधों व परमाणु संयत्रों का विरोध या फिर जल, जंगल, जमीन के सवालों पर संघर्ष करने वाले अधिकांशत: पूंजीवादी विचारधारा के नाना रूपों के आधार पर ही खड़े हैं। यह उनकी सबसे बड़ी सीमा है। कुछ पूंजीवादी विचारधारा में थोड़ा बहुत समाजवाद (जो कि असल में नकली ही होता है) का मुलम्मा चढ़ा होता है। निम्न मध्यम वर्ग या मध्यम वर्ग जो कि पूंजीवादी विचारधारा का अपने वर्गीय चरित्र के कारण वाहक होता है, आसानी से इसे अपना लेता है। अपनी चीज समझता है। अपने विचार समझता है। हालांकि पूंजीवादी समाज उसे लगातार मज़दूर वर्ग की ओर धकेल रहा होता है परन्तु उन्हें समझ में नहीं आता है। जब तक आता है तब तक काफी देर हो चुकी होती है।

पूंजीपति वर्ग का मुकाबला करना है तो मजदूर वर्ग की वैज्ञानिक विचारधारा अपनानी होगी। उसके आधार पर खड़े होकर ही छोटे-बड़े संघर्ष किये जा सकते हैं। एक सूत्र में पूरे देश के शोषित-उत्पीड़ितों के आंदोलनों को जोड़ा जा सकता है। एक केन्द्रीय नेतृत्व जिसका देशव्यापी प्रभाव हो, विकसित किया जा सकता है। तभी उस दिशा में बढ़ा जा सकता है जिसे इंकलाब कहते हैं।